



THE TIMES OF INDIA

Date:25-03-23

1 Good Law, 1 Bad

Rahul's disqualification correct, defamation law problematic

TOI Editorials



The law took its course. Wayanad MP Rahul Gandhi stands disqualified following conviction in a defamation case where a Gujarat court gave him two years jail – the conviction and sentence together disqualify him from Parliament. Gandhi can contest in the 2024 Lok Sabha elections only if his conviction is suspended/overturned, or if appellate courts reduce the jail term. Gandhi had, in 2013, rightly opposed a UPA ordinance to dilute a judicial verdict – the Supreme Court had junked a leeway in law that protected MPs from disqualification while their case was in appeal. His stand was forward-looking as a measure to protect democratic integrity. Criminalisation of politics in India is a serious concern. Almost 30% of 2019 Lok Sabha members stood accused of serious crimes such as corruption and murder; MPs disqualified have been convicted of graft, murder, smuggling, sexual assault and hate speech. Not the disqualification law, but the defamation law is where the rub is. There is no place for criminal defamation in a modern world. In 2016, after SC refused pleas to decriminalise defamation

from three MPs, a bill on the same was introduced in Lok Sabha in 2017 by BJD's Tathagata Satpathy. One way of looking at this particular case is that politicians must develop a thick skin to prevent burns from the scalding heat of campaigning – voters are smarter than to swallow breathing-fire rhetoric. That said, given the highly competitive political system, there's a case for politicians to dial down on coarse political speeches too. As Gandhi appeals his case, there should be no disquiet among opposition about the disqualification law. But on decriminalising defamation, there is plenty to be done by Parliament or by the courts, to end a law bad in spirit and practice.



THE HINDU

Date:25-03-23

Chilling effect

Congress leader Rahul Gandhi's conviction and jail term flags need to abolish criminal defamation

Editorial

The rigours of the law and the tribulations of politics have come together to bedevil Congress leader Rahul Gandhi. An election-time jibe he had made in 2019 — ‘how come all of these thieves have Modi in their names?’ — has been declared by a court in Surat to be defamatory. Mr. Gandhi has been sentenced to two years in prison, the maximum sentence for criminal defamation, and disqualified from his membership in the Lok Sabha. Both the conviction and sentence raise legal questions. Does the remark amount to defaming anyone in particular, or to people with the surname ‘Modi’ as a group? Case law indicates that the expression ‘collection of persons’ used in Section 499 of the IPC, with reference to those who can be defamed, has to be an identifiable class or group and that the particular member who initiates criminal proceedings for defamation must demonstrate personal harm or injury by the alleged defamatory statement. It is difficult to sustain the argument that all those with the surname, and not merely the three individuals including Prime Minister Narendra Modi who were referred to, can be aggrieved persons. Also, it is not clear if the complainant, BJP MLA Purnesh Modi, had shown that he was aggrieved by the alleged slur either personally or as a member of the ‘Modi’ group.

The maximum sentence is also troubling. Statutes prescribe maximum jail terms so that trial courts use their discretion to award punishments in proportion to the gravity of the crime. It is questionable whether attacking an indeterminate set of people with a general remark will amount to defamation, and even if it did, whether it is so grave as to warrant the maximum sentence. The correctness of the judgment will be decided on appeal, but the political cost to Mr. Gandhi in the form of disqualification from the House and from electoral contest will have a lasting impact, unless he obtains a stay on the conviction rather than mere suspension of sentence. In a country that often frets over criminalisation of politics, corruption and hate speeches, it is ironic that criminal defamation should overwhelm the political career of a prominent leader. A modern democracy should not treat defamation as a criminal offence at all. It is a legacy of an era in which questioning authority was considered a grave crime. In contemporary times, criminal defamation mainly acts as a tool to suppress criticism of public servants and corporate misdeeds. In 2016, the Supreme Court upheld criminal defamation without adequate regard to the chilling effect it has on free speech, and to that, one must now add, political opposition and dissent. Opposition parties expressing dismay at the verdict against Mr. Gandhi should include abolishing criminal defamation in their agenda.



Date: 25-03-23

कृषि वैज्ञानिकों को शोध की दिशा बदलनी होगी

संपादकीय



पर्यावरण परिवर्तन का सबसे बड़ा असर कृषि पर पड़ रहा है। मार्च में बारिश हुई। बाकी कसर आंधी और ओलों ने पूरी कर दी। देश के बड़े हिस्से में खड़ी गेहूं और सरसों की फसल बर्बाद हो गई जबकि अंगूर, आम, धनिया, मिर्च और जीरा की फसलों पर भारी असर हुआ। पिछले वर्ष इससे उल्टा हुआ था। मार्च में जबरदस्त गर्मी पड़ी और पैदावार प्रभावित हुई। वर्ष 2021-22 में सितंबर से जनवरी तक समय-समय पर बारिश होती रही, लिहाजा धान की लहलहाती फसल खेतों में सड़ गई और रबी की फसलों पर असर पड़ा। इन तीन वर्षों का रिकॉर्ड बताता है कि दुनिया में हो रहे

पर्यावरण परिवर्तन का पहला और सीधा असर मौसम की अनिश्चितता के रूप में हुआ है। खड़ी फसलों की बर्बादी का मतलब है किनों के की ही नहीं खाद-बीज पानी पर हुए खर्च की भी क्षति भारत में अधिकांश खेती बटाईदार खेत मजदूर करता है जबकि असली मालिक शहरों में रहता है। कोई भी सरकार लागत, श्रम के साथ खेत का किराया मुआवजे में नहीं दे सकती लिहाजा खेती के लिए आने वाला समय संकट का होगा। देश और दुनिया के कृषि वैज्ञानिकों को अपने शोध की दिशा बदलते मौसम के अनुरूप बदलनी होगी। पर्यावरण परिवर्तन वैश्विक मसला है और हल भी पूरी दुनिया को संयुक्त रूप से ना होगा लिहाजा भारत की पहली जरूरत है। कृषि की, जिससे देश के 62% लोग जुड़े हैं, इसके दुष्प्रभावों से सुरक्षित करना।

Live
हिन्दुस्तान
 .com

Date:25-03-23

सियासी शह-मात के खेल में कृपया संसद को न उलझाए

योगेंद्र नारायण,(पूर्व महासचिव राज्यसभा)

"संसद में फिलहाल एक अजीब स्थिति बन गई है। आमतौर पर होता यह है कि विपक्षी दल के सदस्य सदन के वेल में आते हैं या नारेबाजी करते हैं, मगर इस बार तो सत्ता पक्ष के सदस्य भी ऐसा ही कर रहे हैं और सदन नहीं चल रहा। यहां मुझे वे दो मामले याद आ रहे हैं, जब मैं राज्यसभा का महासचिव (साल 2002 से 2007 तक) था और सांसदों के इसी तरह के बर्ताव के बावजूद सदन अपना काम करने में सफल रहा था

पहली घटना 2003 की है। केंद्रीय सतर्कता आयोग (सीवीसी) की एक रिपोर्ट थी, जिसको संसद में पेश करने की मांग तत्कालीन विपक्षी पार्टी कांग्रेस कर रही थी। मगर सीवीसी ने जब वह रिपोर्ट सभापति को सौंपी थी, तब उसने इसको सार्वजनिक न करने की गुजारिश की थी। फिर भी, सत्ता पक्ष और विपक्ष, दोनों तरफ से बहस हुई और अंत में सभापति

ने उस रिपोर्ट को सार्वजनिक न करने का फैसला किया। इसके विरोध में कांग्रेस ने वाकआउट किया। करीब 14 दिन कांग्रेस सांसद सदन से बाहर रहे, लेकिन उन्होंने संसदीय कामकाज में कोई रुकावट नहीं डाली। हालांकि, उस दौरान सत्तारूढ़ राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन का नेतृत्व कर रही भारतीय जनता पार्टी ने भी कोई बिल पेश नहीं किया, ताकि बिना बहस उसे सदन की मंजूरी न मिले।

इसी तरह, भाजपा सांसद मुरली मनोहर जोशी ने इलाहाबाद यूनिवर्सिटी को केंद्रीय विश्वविद्यालय बनाने को लेकर एक बिल पेश किया। कांग्रेस ने 'इंट्रोडक्शन' के समय ही उसका विरोध किया, क्योंकि उसका मानना था कि चुनावी वर्ष में इस तरह के विधेयक पेश नहीं किए जाने चाहिए। मगर तत्कालीन एनडीए सरकार अड़ी रही। तभी ऐन वक्त पर प्रणब मुखर्जी ने वोट की मांग कर दी। इस मतदान में सत्तारूढ़ गठबंधन को मात खानी पड़ी, क्योंकि उसके कई सदस्य उस समय सदन में नहीं, बल्कि इधर-उधर थे। दरअसल, ऐसी किसी वोटिंग से पहले पूरे संसद परिसर में तीन बार घंटी बजाई जाती है और आखिरी घंटी के बाद सदन का दरवाजा बंद कर दिया जाता है। इसके बाद मतदान होने तक न कोई अंदर जा सकता है और न बाहर आ सकता है। उस हार को सत्ता पक्ष ने खुशी-खुशी स्वीकार किया। संसद में शोरगुल के बीच भी बिल पास होते रहे हैं। लोकसभा अध्यक्ष या राज्यसभा के सभापति हंगामे के बीच बिल को सदन की मंजूरी दिलाने में सफल रहे हैं। मगर मौजूदा स्थिति में न तो विपक्ष को अपनी बात रखने का मौका मिल रहा है, और न सत्ता पक्ष कोई बिल पेश कर रहा है।

संसदीय व्यवस्था में संसद चलाने की जिम्मेदारी सरकार की होती है। इसमें लोकसभा अध्यक्ष और राज्यसभा के सभापति भी मदद करते हैं। मौजूदा गतिरोध को खत्म करने के लिए बैठकों का दौर शुरू हो गया था। मगर इनका कोई नतीजा निकलता, उससे पहले ही सूरत की एक अदालत ने राहुल गांधी को विवादित बोल के लिए दो साल की सजा सुना दी। नतीजतन, शुक्रवार को दिन चढ़ते-चढ़ते लोकसभा से उनकी सदस्यता जाने संबंधी अधिसूचना भी जारी हो गई। यह फैसला संविधान के अनुच्छेद 102 (1)(ई) के प्रावधानों और जन-प्रतिनिधित्व कानून-1951 की धारा 8 के तहत लिया गया है। इन सबसे सियासी तापमान स्वाभाविक ही बढ़ गया है। मगर विपक्ष को इसका नुकसान कहीं अधिक हो रहा है। फिलहाल बजट तो संसद से पास हो जाएगा, लेकिन अभी न प्रश्नकाल चल रहा है, जिसमें विरोधी दल के नेता सरकार से सवाल कर सकते हैं, और न किसी बिल पर वे अपनी बात रख पा रहे हैं।

ऐसे में, अब सांसदों को सदन चलाने को लेकर गंभीर हो जाना चाहिए। अडानी-हिंडनबर्ग रिपोर्ट पर संयुक्त संसदीय समिति (जेपीसी) गठित करने की विपक्ष की मांग को बेशक सत्ता पक्ष न माने, लेकिन उसे इस मामले पर बहस के लिए तैयार हो जाना चाहिए। इससे विपक्षी दलों को भी अपनी बात रखने का मौका मिलेगा। रही बात सत्ता पक्ष द्वारा मांगी जा रही राहुल गांधी की माफी की, तो अब वह चूंकि लोकसभा सदस्य नहीं रहे, इसलिए सत्ता पक्ष भी अपनी यह जिद छोड़े और सदन को सुचारु रूप से चलने दे। जन-प्रतिनिधियों को यह समझना चाहिए कि सियासी शह और मात के खेल में जनता के हितों की कतई अनदेखी नहीं हो।